ब्लाइंड ऑपेरा

अपने ढंग से दुनिया को देखना

रंजीता विश्वास

जीर्ण-शीर्ण सीढ़ियों से ऊपर जाने का रास्ता, जहां दिन में भी अंधेरा छाया रहता है। उत्तरी कोलकाता के भीड़भाड़ वाले नीलमणि मित्रा मार्ग पर मौजूद शहर के इस पुराने हिस्से की अन्य बहुत-सी इमारतों की तरह यह इमारत भी खस्ताहाल है। बीते जमाने की याद दिलाता लाल सीमेंट का फर्श नंगे पावों को ठंडक देता है। कमरे के बीच का स्थान खाली है लेकिन कोनों में बिस्तरबंद, बर्तन और पानी की बोतलें धरी हैं। एक कोने में संगीत का साजोसामान ढोल, मंजीरे, घंटे रखे हैं।

आज इस कमरे में रंगबिरंगे वस्त्र पहने हुए पुरुषों और महिलाओं की हंसी गूंज रही है। मीठी खुशबू वाले फूलों की दो मालाएं और मिठाइयों के डिब्बे एक स्टूल पर करीने से रखे हैं। समूह के दो सदस्यों का विवाह होने जा रहा है। वे एक-दूसरे को फूलमाला पहनाते हैं और विवाह के बंधन में बंध जाते हैं। कोई व्यक्ति एक बंगाली गाना गुनगुनाने लगता है। बधाइयों और हंसी के फव्वारों के बीच आपको महसूस होता है कि यहां कुछ बात है जो अलग है। वधू चुमकी पाल और वर संदीप चटर्जी, नेत्रहीन हैं। उनकी खुशी में शामिल और उन्हें घेरे हुए ज्यादातर लोग भी नेत्रहीन हैं।

© CALPIX

चुमकी पाल जब दो साल की थी तो गलत इलाज के कारण उसकी आंखों की रोशनी चली गई। आज इस यादगार दिन के मौके पर उसने फिरोजी-नीली साड़ी पहनी है जिस पर सुनहरी गोटा-पट्टी है। वह कहती है, 'मैं जानती हूं कि यह नीले रंग की है क्योंकि लोगों ने मुझे ऐसा बताया है। मैं इस बात की कल्पना नही कर सकती कि यह कैसी दिखती होगी। लेकिन आप यकीन करिए कि मैं जब भी सपने देखती हूं तो वे रंगों से सराबोर होते हैं।' चटर्जी रवींद्र भारती विश्वविद्यालय से स्नातक की पढ़ाई कर रहे हैं और संगीत उनका प्रमुख विषय है। चुमकी और संदीप की मुलाकात 'ब्लाइंड ऑपेरा' नामक समूह के सदस्यों के रूप में हुई। ब्लाइंड ऑपेरा कोलकाता में नेत्रहीनों का एक नाटक समूह है। यह भारत ही नहीं एशिया में भी अपनी तरह का अकेला समूह है जो पेशेवर समूहों की तरह लगातार कार्यक्रम पेश करता है।

ब्लाइंड ऑपेरा के 36 सदस्य हैं उत्साह से भरपूर, ज्यादातर पूरी तरह से नेत्रहीन हैं। यह समूह इस बात को साबित करता है कि शारीरिक विकलांगता कोई बाधा नहीं है। ये लोग नोबेल पुरस्कार विजेता रवींद्रनाथ टैगोर के राजा या रॅक्तॅकॉरॅबी जैसे नाटकों का मंचन करते हैं जो जानेमाने थियेटर ग्रुपों के लिए भी चुनौतीपूर्ण समझे जाते हैं।

ब्लाइंड ऑपेरा की शुरुआत 1996 में हुई। तब से इस समूह ने कोलकाता के अलावा अन्य शहरों में भी अपने कार्यक्रम पेश किए हैं। यह समूह थियेटर के चार दीवानों- अशोक प्रामाणिक, देवाशीष चौधरी, शुभाशीष गंगोपाध्याय और प्रशांत चटर्जी के प्रयासों का नतीजा है। इन लोगों ने नेत्रहीन पुरुषों और महिलाओं की प्रतिभा को उजागर करने काम को चुनौती के रूप में लिया। चटर्जी के अलावा बाकी सभी शहर के जानेमाने थियेटर ग्रुपों के सदस्य थे लेकिन इन्होंने अपना समय और ऊर्जा ब्लाइंड ऑपेरा की कल्पना को साकार करने के लिए लगाने का फैसला किया और उन ग्रुपों से नाता तोड़ लिया। चटर्जी सामाजिक कार्यकर्ता हैं।

नाट्य मंचन के लिए ऑपेरा का बिल्ला क्यों? निर्देशक सुभाशीष गांगोपाध्याय कहते हैं, 'पहले हमारे नाटक ऑपेरा शैली (गीतिनाट्य) में होते थे। संगीत की धुनों के साथ गायन एवं नृत्य होता था और संवाद बोले जाते थे। और हम यही कुछ तो करते हैं।'

ब्लाइंड ऑपेरा का विचार पहली बार 1994 में आया। इन लोगों ने कोलकाता के दक्षिणी इलाके के बेहाला में कोलकाता ब्लाइंड स्कूल के शताब्दी समारोह के मौके पर एक कार्यशाला आयोजित की। इसमें नाटक 'जाता दूरेई जाइ' की तैयारी की जानी थी। इसमें भाग लेने आए लोग चाहते थे कि अभिनय कला में उनका प्रशिक्षण जारी रहे।

कलाकारों को मंच पर प्रस्तुत करना एक बड़ी चुनौती होती है क्योंकि जगह के प्रबंधन की समस्या रहती है। इस समस्या के समाधान के लिए निर्देशक मंच को अलग-अलग हिस्सों में बांटने के लिए रस्सियों का सहारा लेते हैं। जब कलाकारों के कदम रस्सियों पर पड़ते हैं तो वे समझ जाते हैं कि मंच पर प्रवेश कर रहे हैं। गंगोपाध्याय कहते हैं कि हालांकि समूह के सदस्य देख नहीं सकते लेकिन वे गंध महसूस कर सकते हैं, सुन सकते हैं और छूने का अहसास कर सकते हैं - किसी थियेटर में ये तीनों ही चीजें अंतर्निहित होती हैं। हम मानते हैं कि नेत्रहीन देख सकते हैं - अपने ही तरीके से, हमारी तरह नहीं। अपनी दूसरी क्षमताओं के जरिये।'

ब्लाइंड ऑपेरा के सदस्य 1996 से कलकत्ता में व्यावसायिक नाटकों का मंचन कर रहे हैं। अभिनय के अलावा वे निर्देशन और अध्यापन भी करते हैं और अलग-थलग पड़े दलों और लोगों को जोड़ते हैं। 10 अक्टूबर 2005 को साल्टलेक में रवींद्रनाथ टैगोर के नाटक रॅक्तॅकॉरॉबी में बिशू पागल की भूमिका में सुभाष डे (एकदम बांएं) और नंदिनी की भूमिका निभा रही दल की एकमात्र गैर-दृष्टिहीन सदस्या नज़मा ख़ातून ।

गंगोपाध्याय मानते हैं कि नेत्रहीनों के लिए थियेटर अपनी रचनात्मक ललक को अभिव्यक्त करने का सबसे बढ़िया माध्यम है। 'उनकी अभिव्यक्ति नैसर्गिक होती है, वे किसी और की नकल नहीं कर सकते क्योंकि देख नहीं सकते। उनकी शारीरिक भाषा ही कहानी कहती है और इसीलिए यह सब स्वत:स्फूर्त होता है।'

ब्लाइंड ऑपेरा के कलाकार दर्शकों के लिए भी चुनौती पेश करते हैं- उन्हें अपने प्रदर्शन के हिसाब से आंकने की चुनौती न कि दयाभाव से (अरे बेचारे नेत्रहीन अभिनय कर दे रहे हैं!)। शुरुआत में समूह के संस्थापकों को भी कुछ आशंकाएं थीं। क्या लोग उनकी प्रस्तुतियों को कलात्मक मानेंगे? या सिर्फ कोई कार्यक्रम भर? समूह के लिए यह गौरव की बात है कि उन्हें कोलकाता के विशिष्ट दर्शकों की प्रशंसा मिली है। समूह के सारे सदस्य कार्यक्रमों में भाग लेते हैं और किसी को छोड़ा नहीं जाता। इस मामले में लोकतांत्रिक प्रक्रिया अपनाई जाती है।

ऐसा समूह बनाने का विचार करते समय इसके चारों संस्थापकों का इरादा इसे सिर्फ नाट्यकला की प्रस्तुति वाले समूह तक सीमित रखने का नहीं था। हालांकि नाट्यकला क्षमताओं को जरूरी महत्व दिया गया। ज्यादा जोर नाट्यचिकित्सा पर था जिससे कि ये लोग बाहरी दुनिया से बेहतर तरीके से संवाद स्थापित कर सकें।

समूह के सदस्यों के लिए शारीरिक भाषा की तलाश एक तरह से खुद को पहचानने की यात्रा भी है। ये लोग अलग-अलग पृष्ठभूमि से आए हैं लेकिन सभी एक ही तरह की विकलांगता के शिकार हैं। इन्हें नाटकों के जरिये अपनी रचनात्मकता को अभिव्यक्त करने का मौका मिला है।

अब वे खुद को साथी कलाकारों के साथ जोड़कर देखते हैं और अलगथलग महसूस नहीं करते। आंशिक तौर पर नेत्रहीन 18 वर्षीय देवाशीष कहता है : 'स्कूल में आखिरी साल के बाद मुझे पढ़ाई छोड़नी पड़ी। मैं घर में बैठा रहता था। कुछ भी नहीं करता था। अब मैं खुद को उपयोगी समझने लगा हूं। मैं किसी चीज से जुड़ा हूं।'

इसका चिकित्सकीय प्रभाव भी पड़ता है क्योंकि बाहरी दुनिया के साथ बेहतर तरीके से संवाद स्थापित करने के चलते इनका आत्मविश्वास बढ़ता है। एक छोटे बच्चे की मां मर्जीना खातून सभी के मुंह की बात छीनती कहती है कि समूह के जरिये उनकी अपनी अंधेरी दुनिया और 'रोशन' दुनिया के बीच पुल बन जाता है।

ब्लाइंड ऑपेरा के सदस्य (बाएं से) समीर घोषाल, पल्लव हलधर और सुभाष डे रवींद्रनाथ टैगोर के नाटक रॅक्तॅकॉरॉबी में प्रमुख भूमिका निभाते हैं, बाकी सदस्य पृष्ठभूमि में राजा के सैनिकों की भूमिका में होते हैं।

वे गाते हैं, नाचते हैं और आनंद का अनुभव करते हैं। वैयक्तिक और दर्शकों के स्तर पर संवाद कायम कर पाने का आनंद इतना ज्यादा होता है कि इन लोगों को दूरदराज के इलाकों से शाम के समय कार्यक्रम स्थल तक पहुंचना नहीं अखरता। ये लोग भीड़ भरी बसों और रेलगाड़ियों में दो-तीन घंटे के सफर के बाद यहां पहुंचते हैं। रिहर्सल के दौरान कभी-कभी देर तक रुकते हैं।

ब्लाइंड ऑपेरा विकलांगों के अन्य समूहों से अलगथलग नहीं है। वर्ष 2000 से यह 'प्रतिबोधि ओ प्रांतिक नाट्योत्सव' (विकलांगों और उपेक्षितों का नाट्योत्सव) आयोजित करता है जो देश में अपनी तरह का अकेला आयोजन है। प्रामाणिक कहते हैं, 'उपेक्षितों से हमारा आशय उन लोगों से है जो समाज द्वारा ठुकराए गए हैं जैसे बेघर बच्चे, यौनकर्मियों के बच्चे, जिन्हें साझा मंच पर कार्यक्रम देने का मौका नहीं मिलता।'

इस आयोजन में एक दिन पान-सुपारी उत्सव मनाया जाता है। पूर्वी इलाके के पारंपरिक भारतीय घरों में मेहमानों का स्वागत हमेशा सुपारी और पान पेश करके किया जाता है। इस दिन विभिन्न समूह मित्रता के पारंपरिक प्रतीकों का आदान-प्रदान करते हैं। यह इस समुदाय में एक-दूसरे से नाता जोड़ने का प्रयास है।

इसके पीछे एक बड़ा उद्देश्य है : थियेटर के जरिये विकलांगों के बड़े समुदाय को जोड़कर मुख्यधारा में लाना। इनकी संख्या बहुत ज्यादा है लेकिन ये अलग-थलग हैं। ये लोग मिलकर बड़ी ताकत बन सकते हैं और सार्वजनिक जीवन में बेहतर सुविधाओं की मांग कर सकते हैं। प्रामाणिक का मानना है कि नेत्रहीन बच्चों को शुरुआत से ही मुख्यधारा में आना चाहिए और जितनी ज्यादा संभव हो उतनी शारीरिक गतिविधियों में उनकी भागीदारी होनी चाहिए। 'माता-पिता अक्सर विकलांग बच्चों को दूर रखते हैं या फिर उन पर पर्याप्त ध्यान नहीं देते। यदि आप अचानक चाहें कि बड़ा होने पर बच्चा फुटबाल खेलने लगे तो वह ऐसा नहीं कर पाएगा क्योंकि उसके शरीर में उतनी स्फूर्ति नहीं होगी और वह उतनी सक्रियता नहीं दिखा सकता।' अपनी विश्वसनीयता कायम करने के बाद ब्लाइंड ऑपेरा के सदस्य आज पश्चिम बंगाल के सभी नेत्रहीन विद्यालयों में कार्यशालाएं आयोजित करते हैं ओर अलगथलग पड़े समूहों और लोगों को जोड़ रहे हैं। भारत सरकार का शिक्षा विभाग इस परियोजना में मदद कर रहा है। इन सभी विद्यालयों में नाट्यचिकित्सा पाठ्यक्रम का हिस्सा है। ऑपेरा के सदस्य अध्यापक बन गए हैं। गंगोपाध्याय गर्व के साथ कहते हैं कि निर्देशकों की दूसरी पीढ़ी तैयार हो रही है। उनका मुख्य अभिनेता सुभाष डे नेत्रहीन है। उसने अलीक दृष्टि (दैवीय दृष्टि) नामक नाटक का निर्देशन किया है। उसे अपने अगले कार्यक्रम की प्रस्तुति का इंतजार है। गंगोपाध्याय के अनुसार, 'ये लोग मिलकर इस आंदोलन को आगे बढ़ाएंगे और हम शुरुआत करने वाले लोग पृष्ठभूमि में चले जाएंगे।'

इस समूह का एक बड़ा सपना एक नाट्य विद्यालय की स्थापना करने का है जिसमें टैगोर के शांतिनिकेतन के आदर्शों के अनुरुप विकलांगों और उपेक्षितों को जो आर्थिक और सामाजिक रूप से हाशिये पर हैं अपनी रचनात्मक अभिव्यक्ति का मंच मिल सके। चुमकी पाल की तरह ये भी रंगीन सपने देखते हैं।

लेखक: *रंजीता बिस्वास कलकत्ता में रहती हैं। मुक्त लेखन के अलावा वे अनुवाद करती हैं और कहानियां लिखती हैं।*